समाचार अवलोकन

बदले मौसम चक्र के साथ लहलहाएंगी फसलें दैनिक जागरण फरवरी 5, 2008	मौसम के बदले मिजाज के हिसाब से ही अब फसलें मौसम चक्र को मात देते हुए लहलहाएंगी। बदले मौसम की चाल भांपकर फसलों की बर्बादी रोकने के लिए हथियार होगा नया मौसम चक्र। इस नई पहल को मूर्त रूप देने के लिए पंतनगर कषि विश्वविद्यालय ने चुनिंदा 31 कषि वैज्ञानिकों की टॉस्क फोर्स तैयार कर ली है। उन प्रमुख बिन्दुओं को भी तय कर लिया गया है, जिन पर शोध व सर्वेक्षण किया जाना है। मौसम पर आधारित फसल– चक्र तैयार करने की दिशा में देश भर के कषि विश्वविद्यालयों में पंतनगर विश्वविद्यालय का यह पहला कदम बताया जा रहा है। समय पर बरसात न होने, दिन में गर्मी और रात में सर्दी, कहीं–कहीं बेमौसमी बेहिसाब पाला पड़ने , फसली रोग आदि लगने से आम आदमी को आर्थिक क्षति तो है ही, स्वास्थ्य पर भी दुष्प्रभाव पड़ रहा है। फल और सब्जियां तो इससे जबरदस्त प्रभावित हो रही हैं। टास्क फोर्स में मौनपालन, बीज, मत्स्य, पशु चिकित्सा, फसल और फल अनुसंधान, जल संरक्षण एवं प्रबंधन समेत विभिन्न क्षेत्रों के वैज्ञानिकों को शामिल किया गया है। वातावरण में क्या परिवर्तन हो रहे हैं, कितना और कितनी तीव्रता से फर्क आ रहा है, इससे कषि, जानवरों, प्लांटेशन, प्रजनन, पोषण, आपूर्ति, सरवाइवल व उत्पादकता पर असर, वातावरण को नियंत्रित करने के उपाय, नया फसल चक्र क्या हो, कौन सी प्रजातियां विकसित हों, जल संरक्षण और संवर्धन कैसे हो, आदि बिंदुओं पर टॉस्क फोर्स काम करेगी। हिमालयी राज्यों के साथ ही मैदानी क्षेत्रों में भी शोध और सर्वेक्षण बारीकी से होगा।
बासमती के बाद अब महकेगा जैविक धनियां दैनिक जागरण फरवरी 9, 2008	प्रदेश में ऑरगेनिक पैकेज की कवायद तेज हो गई है। बासमती व गन्ने के बाद अब तराई में जैविक धनिया *'कोरियंडर सटाइवस'* भी महक बिखेरेगा। तीन साल के शोध के बाद इसका प्रामाणिक बीज तैयार कर सफल प्रयोग कर लिया गया है। फिलहाल इसकी पौध 15 एकड़ क्षेत्रफल में लहलहा रही है। खास बात यह है कि किसानों को इसके दाम आम धनिये की तुलना में ज्यादा मिलेंगे। बाजार भाव चढ़ा तो उन्हें 20 प्रतिशत प्रीमियम का लाभ भी मिलेगा। यदि कषि विशेषज्ञों का मिशन कामयाब रहा तो आने वाले दौर में मिट्टी की घटती ताकत को बढ़ाया भी जा सकता है। इस योजना को मूर्त रूप देने को गत वर्ष जैविक उत्पाद परिषद् की पहल पर राज्य के विभिन्न जिलों में किसानों का फेडरेशन तैयार किया गया। शुरूआत हुई जैविक बासमती से। इसके बाद कषि विभाग व जैविक उत्पाद परिषद् के संयुक्त प्रयासों से जैविक गन्ने के क्षेत्र में भी कदम रखा गया। बहरहाल बासमती व गन्ने के बाद अब जैविक धनिया भी उगा लिया गया है। हालांकि यह 15 एकड़ भूमि में ही लगाया गया है, मगर इसका प्रामाणिक बीज तैयार होने के बाद कषि विशेषज्ञों की बांछें खिल उठी

	हैं।
अब उत्तर भारत के हाथियों को भी भाया यूकेलिप्टस दैनिक जागरण फरवरी 26, 2008	अब तक दक्षिण भारत के ही हाथी यूकेलिप्टस खाते थे, लेकिन अब उत्तार भारत के हाथी भी यूकेलिप्टस खा रहे हैं। हरिद्वार वन प्रभाग व राजाजी नेशनल पार्क के हालिया अध्ययन में वैज्ञानिकों ने पाया कि यहां कुछ नर हाथी यूकेलिप्टस को बड़े चाव से खा रहे हैं। हालांकि यह प्रारम्भिक आंकड़े हैं, लेकिन वैज्ञानिकों ने इस पर अपना ध्यान केंद्रित कर दिया है। यूकेनिप्टस में पानी की मात्रा अधिक होती है, लिहाजा प्यास मिटाने के लिए बेहद उपयोगी माना जाता है। पिछले वर्ष हरिद्वार वन प्रभाग के श्यामपुर रेंज की अंजनी बीट में नर हाथियों को यूकेलिप्टस की छाल खाते देखा गया, जिसके चलते वैज्ञानिकों ने इन पर विशेष नजर रखनी शुरू कर दी। वन्य जीव वैज्ञानिक डा० रितेश जोशी को राजाजी की चीला रेंज के मुंडाल में नर हाथी यूकेलिप्टस की छाल खाते दिखाई दिए। फिलहाल अभी इस तरह के दो हाथियों को चिन्हित किया गया है। डा० जोशी बताते हैं कि इससे पहले राजाजी में हाथी, कुल 53 प्रजातियों को भोजन के रूप में इस्तेमाल करते थे। उसके बाद सागौन, जिसे हाथी कभी पंसद नहीं करता था, 2002 के बाद उसे भी भोजन के रूप में प्रयोग करने लगा। दरअसल सागौन में भी पानी की काफी मात्रा होती है।
भारत के लिए खतरे की घंटी अमर उजाला मार्च 17, 2008	यूनाइटेड नेशन इनवायरमेंट प्रोग्राम (यूएनइपी) ने चेतावनी दी है कि हिमालय पर्वत श्रृंखला पर ग्लेशियरों का संकुचन भारत के लिए कई समस्याएं पैदा कर सकता है। इसके कारण खेती से लेकर ऊर्जा उत्पादन और शीतकालीन खेलों पर भी बुरा असर पड़ सकता है। रिपोर्ट में कहा गया है कि विश्व भर के ग्लेशियर बहुत तेजी से संकुचित हो रहे हैं और अगर यही रफ्तार रही तो कुछ दशकों में इनका अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। नौ पर्वत श्रखंलाओं के 30 ग्लेशियरों के अध्ययन के बाद यह पता चला कि इनके पिघलने और क्षीण होने की रफ्तार वर्ष 2006 में सबसे अधिक थी। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि भारत की नदियों में हिमालय श्रखंला के ग्लेशियर से पानी आता है और अमेरिका के पूर्व कछार को रॉकी पर्वत से पानी की आपूर्ति होती है।
विलुप्त हो रहे पीपल, बरगद के पेड़ अमर उजाला मार्च 22, 2008	हिंदू धर्म में धार्मिक महत्व से पूजे जाने वाले पीपल और बरगद (वटवक्ष) के पेड़ धीरे–धीरे विलुप्ति के कगार पर पहुंच चुके हैं। ये वक्ष आस्था से लेकर सामाजिक सरोकारों से जुड़े हैं। धार्मिक आयोजन हो या गांव की चौपाल सबका ठिकाना पीपल और वटवक्ष रहते हैं। इन पेड़ों को देवतुल्य माना जाता है, लेकिन इनके रोपण और संरक्षण पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। यदि यही स्थिति रही तो आने वाले समय में पूजा के वक्त पीपल के पत्ते ढूंढे नहीं मिलेंगे। पौराणिक काल से ही लोग सुख समद्धि, शांति और दीर्घायु कामना के लिए चतुर्दशी का

	व्रत लेकर श शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि को पीपल और बड़ के पौधों का रोपण किया करते थे। गांव में हर घर की चौखट पर पीपल और आम के पत्तों की माला आज भी दिखाई देती है। वहीं, पीपल के पेड़ों के चारों ओर धागे लपेटने की परंपरा भी रही है, लेकिन चिंता यह है कि वर्षो पुराने ये वक्ष सिमटते जा रहे हैं। लोगो में भगवान के नाम पर व्रत रखने की परम्परा तो कायम है, लेकिन व्रत के साथ पीपल और बरगद के पौधों को लगाने की परम्परा समाप्त हो चुकी है। पुरखों द्वारा इनको गांवों के चौपलों और आम रास्तों पर गर्मी के दिनों में छाया के लिए लगाया जाता था। वन विभाग का कहना है कि वक्षारोपण महोत्सव के मौके पर बरगद और पीपल के पौधों का रोपण किया जाता है।
परम्परागत दालों के बीज भी तैयार करेगी टीडीसी अमर उजाला मार्च 30, 2008	पर्वतीय जिलों में गहत और कुलथ जैसी परम्परागत दालों के बीज की कमी से भी किसानों को जल्द निजात मिलेगी। तराई बीज विकास निगम पंतनगर विश्वविद्यालय के सहयोग से दालों के बीज तैयार करने जा रही है। यह बीज कितना होगा और किन क्षेत्रों की क्या जरूरत है, इसके लिए निगम सर्वे भी कराने जा रहा है। पर्वतीय क्षेत्रों में परम्परागत दालों के बीज के लिए किसानों के सामने परेशानी खड़ी होने लगी है। इसका कारण परम्परागत खेती में फसल से ही बीज को निकालकर उपयोग करने को माना जा रहा है। इस कारण बीजों की गुणवत्ता पर फर्क पड़ रहा है। दूसरी तरफ पर्वतीय क्षेत्रों में असिंचित भूमि की अधिकता और बीज प्रतिस्थापन की मात्रा कम होने से भी पर्वतीय जिलों के किसानों को बीजों की किल्लत का सामना करना पड़ रहा है। हांलाकि पर्वतीय जिलों के लिए कोर वैली बीज परियोजना भी संचालित की जा रही है, पर अभी तक इसके अपेक्षित परिणाम सामने नहीं आ पाए हैं। तराई बीज विकास निगम ने पर्वतीय जिलों में परम्परागत दालों के बीज तैयार करने का निर्णय लिया है। निगम के अधिकारियों के मुताबिक आधार बीज की डिमांड की सटीक जानकारी के लिए अब सर्वे की तैयारी भी की जा रही है। इस सर्वे से यह पता लगाया जाएगा कि किस क्षेत्र में किस तरह के और कितनी मात्रा में बीजों की जरूरत है। इस सर्वे से सामने आने वाले परिणाम के बाद ही बीजों को तैयार करने की शुरूआत होगी।
राज्य में लहलहाएंगे दो करोड़ बांज के वक्ष दैनिक जागरण अप्रैल 7, 2008	पर्यावरण संतुलन व वानस्पतिक विविधता के अलावा जल स्रोतों की रिचार्जिंग के लिए वन विभाग पर्वतीय क्षेत्रों में भारी मात्रा में बांज की नई पौध रोपने की तैयारी में है। इसके लिए सभी विभागीय नर्सरियों में पौध तैयार कर ली गई है। 2000 फीट ऊंचाई से ऊपर के वनों में ओक प्रजातियों को वर्ष के अंत तक रोप दिया जाएगा। पौधरोपण के खास अभियान में ग्राम समूहों व व्यक्तियों को भी शामिल किया जाएगा। इसके लिए उन्हें भुगतान भी किया जाएगा। वन विभाग के अपने संसाधनों से चलाई जा रही परियोजना में 5 करोड़ से अधिक

	की लागत आने का अनुमान है। कुमाऊं व गढ़वाल मंडल में ओक प्रजातियों फल्यांट, रियांज, खर्सू आदि के २ करोड़ से अधिक वक्षों की पौध सन् 2010 तक राज्य के वनों में लहलहा उठेगी। बांज के एक स्वस्थ पौधे को तैयार होने में दो से ढाई साल का समय लग जाता है। हरिद्वार, ऊधमसिंह नगर व देहरादून को छोड़ दोनों मंडलों के पर्वतीय क्षेत्रों में परियोजना के तहत कार्य होगा।
ऊंचाई वाले क्षेत्र में होगा ट्राउट मछली का संरक्षण व उत्पादन दैनिक जागरण अप्रैल 8, 2008	प्रदेश के मध्यम ऊंचाई वाले पर्वतीय क्षेत्र में ट्राउट मछली के संरक्षण व विकास के लिए फ्रांस के इंस्टिट्यूट ऑफ टिसी कोटा के साथ अनुबंध के बाद 121 करोड़ की योजना पर पंतनगर कषि विश्वविद्यालय के मत्सय विभाग ने कवायद शुरू कर दी है। इससे लुप्त प्रायः प्रसिद्ध ट्राउट मछली का संरक्षण व उत्पादन में सफलता मिल सकेगी। इसके अलावा मध्यम ऊंचाई के नदी, झीलों, तालाबों में महाशीर मछली के संरक्षण का कार्य भी जारी है। निकट भविष्य में ईको टूरिज्म के तहत पर्यटकों के आकर्षित होने के साथ ही स्थानीय लोगों की आर्थिक स्थिति सुदढ़ होगी। मध्यम ऊंचाई के पर्वतीय क्षेत्र में वर्तमान में कालागढ़, पंचेश्वर, जागे वर क्षेत्र में सुनहरी मछली हैं। उक्त मछली की पर्यावरण संतुलन में महत्वपूर्ण भूमिका है। चंपावत जिले के यामलाताल, चमोली के देवरियाताल समेत मध्यम ऊंचाई की सातताल, खुर्पाताल, भीमताल, नैनी आदि में सुनहरी महाशीर के संरक्षण व उत्पादन की योजना है।
मधुमेह रोगियों के लिए मडुवा रामबाण अमर उजाला अप्रैल 18, 2008	मधुमेह रोगियों के लिए मडुवे का फूड सप्लीमेंट रामबाण साबित हो सकता है। पर्वतीय इलाके में बहुतायत में होने वाले मडुवे पर पंतनगर कषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय में चल रहे शोध के उत्साहजनक परिणाम ऐसा ही संकेत दे रहे हैं। बच्चों और गर्भवती महिलाओं के लिए भी यह सप्लीमेंट फायदेमंद रहेगा। मडुवा ऊर्जा का अक्षय भंडार माना जाता है। इसी मान्यता को ध्यान में रखते हुए पंतनगर विश्वविद्यालय के मॉलिक्यूलर बायोलॉजी एवं जेनेटिक्स विभाग ने मडुवे पर शोध शुरू किया। शोध में पता चला कि मडुवा में फ्लो रिलिजिंग शुगर होता है। सामान्य भोजन करने पर शरीर में शुगर की मात्रा तेजी से बढ़ती है जबकि मडुवे से बना भोजन करने पर शरीर में शुगर धीरे–धीरे बढ़ता है। इसी गुण के चलते मडुवे से बना कोई भी पदार्थ मधुमेह रोगियों को नुकसान नहीं करेगा। शोध के दौरान मडुवे में 45 प्रतिशत अमीनो एसिड पाया गया। वैज्ञानिकों के अनुसार अमीनो एसिड शरीर में किसी पदार्थ के सेवन से ही पहुंच सकता है। इस लिहाज से भी मडुवा मधुमेह रोगियों के लिए लाभदायक साबित होगा।
एवरेस्ट पर भी उगेंगे पेड़ दैनिक जागरण	पिछले पांच दशकों से हिमालय की जलवायु में जारी बदलाव इसी रफ्तार से जारी रहा तो बहुत संभव है कि आने वाले समय में दुनिया की सबसे ऊंची चोटी एवरेस्ट पर भी पेड़ उगने लगें। आप भले ही

अप्रैल 23, 2008	भरोसा न करें लेकिन ग्लोबल वार्मिंग के कारण मध्य हिमालय में समुद्र तल से 4000 मीटर ऊंचाई वाले वे हिमालयी क्षेत्र भी पेड़ उगने लायक हो जायेंगे, जहां वनस्पतियां तक नहीं उग पाती थीं। वैज्ञानिकों के मुताबिक समूचे विश्व के पर्यावरण के लिए यह शुभ संकेत नहीं है। इसरो के स्पेस एप्लिकेशन सेंटर अहमदाबाद के वैज्ञानिकों और जाने माने पारिस्थितिकी विज्ञानी प्रो० एस०पी० सिंह के संयुक्त शोध के निष्कर्ष तो यही इशारा करते हैं। मध्य हिमालय के ऊंचाई वाले क्षेत्रों के टेंपोरल सेटेलाइट रिमोट सेंसिंग डाटा के अध्ययन से यही निष्कर्ष निकले हैं। शोध से पता चला है कि 1960 में जहां नंदादेवी बायोस्फेयर रिजर्व के 15 प्रतिशत भूभाग में ग्लेशियर, 38 फीसदी में बर्फ और 44 फीसदी क्षेत्र में चट्टानों का मलबा था जबकि वनस्पति के रूप में छिटपुट छोटी झाडियां थी। मार्च 1986 तक इसमें बदलाव आया और 1-4 वर्ग किमी क्षेत्र में वनस्पतियां दिखने लगीं। लेकिन 1999 में तस्वीर काफी बदल गई। बर्फ कम हो गई, चट्टानों का मलबा बढ़ गया। 2004 आते आते वनस्पति ने बर्फ से लकदक इस इलाके में 60 वर्ग किलोमीटर का इलाका हथिया लिया। 1986 में जहां वनस्पति क्षेत्र महज एक फीसदी था। 18 साल यानी 2004 में वह 22 फीसदी तक पहुंच गया। बर्फीले ग्लेशियर का इलाका भी नब्बे फीसदी से घटकर 35 फीसदी ही रह गया। इतना ही नहीं 1986 तक जहां 3900 मीटर से ज्यादा ऊंचाई पर ही इमारती लकड़ी वाले पेड़ उगते थे 2004 तक वे 4300 मीटर की ऊंचाई पर भी उगने लगे। प्रो० सिंह के मुताबिक टुंड्रा वनस्पति रेखा भी 5300 मीटर तक जा पहुंची है।
दावानल : बेकाबू हालत, कमजोर उपाय अमर उजाला अप्रैल 29,2008	जंगल धधक रहे हैं। धूं–धूं कर जल रहे हैं। दावाग्नि से निबटने के लिए सरकारी मशीनरी फिर जद्दोजहद कर रही है। जंगलो में आग सभी जगह है, मगर गढ़वाल मंडल की चुनौती ज्यादा तगड़ी है। अभी तक सामने आए दावाग्नि के मामलों में 80 फीसदी गढ़वाल क्षेत्र से ही संबंधित है। इसमें भी रिजर्व फारेस्ट क्षेत्र में सबसे ज्यादा आग लग रही है। अग्निकाल शुरू होने से पहले वन विभाग ने जो कसरत की थी, अब उत्तराखण्ड के हर जिले में उसकी कड़ी परीक्षा हो रही है। हालात बद से बदतर होने को कुछ इस तरह समझा जा सकता है। वर्ष 2006 में पूरे फायर सीजन में 600 हेक्टेयर से भी कम क्षेत्र का नुकसान हुआ था। इस वर्ष फायर सीजन अभी आधा गुजरा है और प्रभावित होने का आंकड़ा इससे आगे निकल चुका है। गढ़वाल मंडल में वनाग्नि के सबसे ज्यादा करीब ढाई सौ मामले सामने आए हैं। इसमें भी डेढ़ सौ से ज्यादा मामले रिजर्व फारेस्ट क्षेत्र में है। पौड़ी और चमोली जिले सबसे ज्यादा प्रभावित हैं। कुमाऊं क्षेत्र में गढ़वाल के मुकाबले कम जंगल जले हैं। यहां जितने भी वनाग्नि के मामने सामने आए है, वे रिजर्व फारेस्ट और सिविल सोयम–वन पंचायत में बराबर–बराबर हैं।

पहाड़ से रूठ रही प्रकति, स्रोतों की शामत अमर उजाला अप्रैल 29, 2008	पहाड़ से प्रकति का प्रेम अब शायद पहले जैसा नहीं रहा। भीषण गर्मी में पहाड़ आग उगल रहे हैं। पर्वतीय क्षेत्र में पीने के पानी का आधार माने जाने वाले प्राकतिक स्रोतों पर भी प्रकति की मार पड़ी है। दून, पिथौरागढ़, चंपावत जैसे जिलों में पानी के प्राकतिक स्रोतों को सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचा है। स्रोतों के 40 से 90 फीसदी तक सूखने की सूचनाएं मिल रही हैं। आपदा प्रबंधन विभाग की कसरत से जो तस्वीर उभरी है, वह आम आदमी के होश उड़ाने के लिए काफी है। पर्वतीय क्षेत्र में पहले से ही पानी की दिक्कत है। स्रोत सूख जाने के बाद पेयजल संकट और बढ़ना तय है। प्राकतिक जल स्रोतों के सूखने के मामले पर्वतीय क्षेत्रों में ज्यादा सामने आए हैं। यह स्थिति इसलिए भी चिंताजनक है, क्योंकि पर्वतीय क्षेत्रों की सवा पांच हजार पेयजल योजनाओं का आधार प्राकतिक जल स्रोत ही है। आपदा प्रबंधन विभाग की रिपोर्ट में खास तौर पर दून, पिथौरागढ़, चंपावत, टिहरी जैसे जिलों में प्राकतिक स्रोत सूखने की सूचनाएं सामने आई हैं। इसका सीधा नुकसान 700 से ज्यादा गांवों की पेयजल आपूर्ति पर पड़ने की आशंका है।
अब प्रदेश में होगी कांट्रेक्ट खेती अमर उजाला अप्रैल 29, 2008	प्रदेश में भी अब कांट्रेक्ट खेती शुरू होने जा रही है। सामूहिक खेती के लिए आगे आए पौड़ी जिले के दिखेत गांव के लोग अब इंडियन ग्लाइकोल की मदद से गेंदे के फूलों की खेती करने जा रहे हैं। इसके लिए प्रत्येक प्रवासी ने फिलहाल एक हजार रूपये अपनी तरफ से मिलाएं हैं और आईजीएल ने फूलों के बीज उपलब्ध कराने का विश्वास दिलाया है। कांट्रेक्ट या ठेके पर खेती को लेकर बहस का दौर जारी है। इसके स्याह पक्ष को लेकर भी आवाज उठाई जाती रही है। ठेके पर खेती की अभी प्रदेश में शुरूआत नहीं हो पाई है। नया मंडी एक्ट लागू न होने के कारण यह मामला अधर में लटका है। दूसरी ओर सामूहिक खेती की पहल करने वाले दिखेत गांव के प्रवासियों ने इसी ठेके पर खेती की परंपरा की जाने–अनजाने प्रदेश में नींव डाल दी है। प्रवासियों की ओर से इंडियन ग्लाइकोल के साथ इस संदर्भ में जल्द ही अनुबंध हो रहा है। कषि मंत्रालय के सूत्रों के अनुसार आईजीएल कंपनी गांव के लोगों को गेंदे के बीज उपलब्ध कराएगी और साथ ही फूल तैयार हो जाने पर तीन रूपया प्रति फूल के हिसाब से खरीददारी भी करेगी। अनुमान लगाया जा रहा है कि करीब तीन लाख रूपये की पूंजी निवेश कर गांव के लोग 26 लाख रूपये कमा पाएंगे।
नर्सरी लगाकर महिलाएं बनेंगी आत्मनिर्भर दैनिक जागरण अप्रैल 30, 2008	अब बागवानी के क्षेत्र में भी महिलाएं स्वावलंबी बनेंगी। वे खुद पौधे उगायेंगी और उनकी बिक्री भी खुद करेंगी। वे खुले बाजार में बिक्री के साथ ही विभाग को भी पौध देंगी। इसके लिए महिला समितियों का गठन होगा और किसान महिला नर्सरियों की स्थापना की जायेगी। यह पहल करने जा रहा है वन विभाग। शासन के निर्देश पर वन पंचायत

	विभाग ने 1.60 करोड़ का प्रस्ताव उसको भेज दिया है। योजना के तहत राज्य में 158 महिला काश्तकार समूह बनेंगे और बीस, तीस चालीस व पचास हजार पौध क्षमता की नर्सरियां लगाई जाएंगी। प्रथम चरण में राज्य के 20 प्रभागों में कार्य होगा। पर्वतीय क्षेत्र में बांज, चीड़, उतीस, हरड़, बहेड़ा, आंवला, आदि और मैदानी क्षेत्र में वहां की परिस्थितियों के अनुरूप प्रजातियों के पौधों को उगाया जाएगा। नर्सरी तैयार करने के लिए विभाग से सहायता व तकनीकी जानकारी दी जाएगी। वन विभाग के माध्यम से प्रस्ताव मांगे जाएंगे। नर्सरी में 20 प्रतिशत फलदार वक्षों के पौध तैयार करने की भी बात शामिल है।
ग्लोबल वार्मिंग निगल जाएगी बांज के जंगल दैनिक जागरण मई 8, 2008	एक वक्त ऐसा भी आएगा जब पहाड़ की लोक कथाओं लोक गीतों में बसने वाला बांज का जंगल अतीत की बांज हो जाएगा। लुप्त हो जाने वाले ये दुनिया के पहले वन होंगे। ग्लोबल वार्मिंग हिमालय पर ऐसा ही बुरा असर डालने वाली है। गोविन्द बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान के वैज्ञानिकों का शोध बांज के जंगलों के बारे में यही भविष्यवाणी करता है। वैज्ञानिक सुब्रत शर्मा और एस०पी० सिंह के शोध के मुताबिक हिमालयी क्षेत्र अपनी विशेष भौगोलिक परिस्थितियों, जलवायु के कारण बेहद संवेदनशील है। ग्लोबल वार्मिंग की वजह से हो रहे जलवायु परिवर्तन का सीधा असर यहां उच्च हिमालय में स्थित बांज वनों पर पड़ेगा। वैज्ञानिकों का कहना है कि जैसे–जैसे ग्लोबल वार्मिंग की वजह से जलवायु परिवर्तन हो रहा है। बांज के जंगलों के लिए मुफीद स्थान उनके लायक नहीं रह गया है। शोध के मुताबिक बांज प्रजाति प्राकतिक रूप से गर्म स्थान से ठंडी जगह पर शिफ्ट हो जाता है, लेकिन यह प्रक्रिया बेहद धीमी है। बांज के वन अक्सर चोटियों के पास उगते हैं। बांज के बीज एक तो पिंडज प्रकति के होते है और उनके उगने की दर भी अन्य पेड़ों की अपेक्षा कम होती है। इतना ही नहीं बहुत से बीजों को भालू, बंदर आदि जानवर खा जाते हैं। ऐसी परिस्थितियों में बहुत आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि एक दिन हिमालयी क्षेत्रों से बांज के वन विलुप्त हो जाएं। पहाड़ों में जल स्तर बनाए रखने और जल संचय में बांज वक्षों को बहुत उपयोगी समझा जाता है। बांज की जड़ें पानी का स्त्रोत समझी जाती है। ऐसे में बांज के वन विलुप्त हो गए तो पहले से ही जल संकट से जूझ रहे पहाड़ को और भारी जल संकट का सामना करना पड़ सकता है।
ग्लेशियर में मानीटरिंग केंद्र स्थापित किया अमर उजाला मई 12, 2008	देश के हिमालय क्षेत्र में साढ़े तीन सौ से भी ज्यादा छोटे–बड़े ग्लेशियर हैं, लेकिन जलवायु परिवर्तन के खतरों के बावजूद इनके अध्ययन की दिशा में केंद्र सरकार ने कोई कदम नहीं उठाया है। सिक्किम सरकार ने इस दिशा में पहल की है। पश्चिमी सिक्किम में नेपाल बार्डर पर स्थित ईस्ट राठोंग ग्लेशियर में एक मानीटरिंग केंद्र की स्थापना की गई है। इसके जरिये ग्लेशियर के पिघलने की रफ्तार, कारण और हर साल होने वाली बर्फबारी का आंकलन किया जाएगा।

	ग्लेशियरों के अध्ययन के लिए देश में उठाया गया यह पहला कदम है। ग्लेशियर वैज्ञानिक इकबाल हसनैन ने बताया कि ईस्ट राठोंग ग्लेशियर का बेंचमार्क ग्लेशियर के तौर पर अध्ययन किया जाएगा। यह केंद्र 5 हजार मीटर की ऊंचाई पर स्थापित किया गया है। मानसून के दौरान इस क्षेत्र में बर्फबारी होती है जिससे ग्लेशियर का आकार बढ़ना चाहिए। लेकिन यह ग्लेशियर तेजी से पिघल रहा है और अनुमान के अनुसार पिछले दस सालों में लगभग 2.5 किलोमीटर मीटर पिघल चुका है। इसी के मद्देनजर यहां मानीटरिंग केंद्र स्थापित किया गया है ताकि इसके कारणों की पड़ताल की जा सके।
अंटार्कटिक में डीडीटी से पिघल रहे हैं ग्लेशियर अमर उजाला मई 12, 2008	अंटार्कटिक में ग्लेशियरों के पिघलने का प्रमुख कारण जहरीले रसायन डीडीटी का अंधाधुंध इस्तेमाल है। हांलाकि अब डीडीटी का इस्तेमाल सीमित कर दिया गया है लेकिन दो दशक पहले तक पूरी दुनिया में बतौर कीटनाशक इसका खूब इस्तेमाल होता था। वैज्ञानिकों का कहना है कि हवा के साथ डीडीटी के अंश ग्लेशियरों तक पहुंचे और ऊंचे ग्लेशियरों की बर्फ में भंडारित होते गए जो अब बर्फ को गलाकर पानी बना रहे हैं। हाल में किए गए शोध में अंटार्कटिक में पाए जाने वाले पेंगुइन के रक्त में डीडीटी के अंश मिले हैं। इस आधार पर वैज्ञानिकों का दावा है कि ग्लेशियरों में अभी भी डीडीटी के कण मौजूद हैं जो इनके पिघलने का कारण बन रहे हैं। डब्लूएचओ के अनुसार 1980 में दुनिया में डीडीटी का इस्तेमाल 40 हजार टन सालाना था जो अब सिर्फ एक हजार टन रह गया है। सिर्फ उन्हीं देशों में इसका सीमित इस्तेमाल होता है जहां मच्छर या बैक्टर बार्न बीमारियों का प्रकोप ज्यादा है। भारत में इसका सीमित इस्तेमाल होता है। सांइस पत्रिका 'न्यू साइंटिस्ट' की रिपोर्ट के अनुसार अमेरिका की वरजीनिया इंस्टीटयूट ऑफ मैरीन साइंस की शोधकर्ता हैदी जेइज की टीम ने अंटार्कटिका में पेंगुइन के रक्त के नमूनों की जांच में उनमें डीडीटी की मात्रा की पुष्टि की है। वैज्ञानिकों का आगे का अनुसंधान बताता है कि अंटार्कटिका में बर्फ में डीडीटी के अंश भारी मात्रा में जमे हुए हैं। यहीं से वे पेंगुइन के शरीर में भी पहुँचे हैं।
अब बचाया जा सकेगा शीशम अमर उजाला मई 25, 2008	शीशम के सूखने की बीमारी अब विशेषज्ञों की चिंता का सबब नहीं बनेगी। फारेस्ट रिसर्च इंस्टीट्यूट ने पांच क्लोन विकसित किए हैं। ड्राई क्लाइमेट यानी शुष्क वातावरण के शीशम को उसकी बीमारी से यह क्लोन निजात दिला सकेंगे। शीशम के हजारों पेड़ तना सूखने की बीमारी से ग्रसित हो तकरीबन खत्म हो चुके हैं। बीमारी का इलाज ढूंढने का जिम्मा एफआरआई के वैज्ञानिकों ने उठाया। सालों की मेहनत के बाद इन वैज्ञानिकों ने आखिर इलाज ढूंढ निकाला। उन्होंने ऐसी जगहों के पेड़ों के लिए क्लोन विकसित करने में कामयाबी हासिल कर ली है, जहां ड्राई क्लाइमेट है। अब ऐसी जगहों के लिए क्लोन बनाने की कोशिश की जा रही है, जहां वाटर लेवल ज्यादा है।

	बिहार जैसे राज्य वैज्ञानिकों के लिए चुनौती बने हुए हैं। दरअसल, दोनों जगह वक्षों के पनपने की परिस्थितियों की भिन्नता के चलते दोनों तरह के शीशम को बीमारी से बचाने के लिए अलग–अलग तरह के क्लोन विकसित किए जाने की जरूरत पहले से ही समझ ली गई थी।
टाइगर-जेड' रखेगा प्रदूषण पर नजर अमर उजाला जून 2, 2008	प्रदूषण पर 'टाइगर–जेड' नजर रखेगा। नेशनल एयरोनाटिक्स एंड स्पेस एडमिस्ट्रेशन (नासा) ने प्रदूषण और ग्लोबल वार्मिंग के बढ़ते खतरे को देखते हुए आर्यभ प्रेक्षण विज्ञान शोध संस्थान (एरीज) में टाइगर–जेड प्रोजेक्ट के तहत एयरोनाट सेंटर विकसित किया है। सेंटर से ग्राउंड, सेटेलाइट और हवा तीनों जगह से प्रदूषण पर हर पल नजर रखी जा सकेगी। अभी तक विशेषकर उत्तराखण्ड में प्रदूषण के आंकलन, अध्ययन और उससे पड़ने वाले प्रभाव को लेकर कोई ठोस पहल नहीं हुई थी केवल एरीज में प्रारम्भिक तौर पर वायुमंडलीय अध्ययन शुरू हुआ है। एयरोनाट सेंटर में कई अत्याधुनिक उपकरण लगाए गए हैं। स्वचालित यह उपकरण जमीन के साथ सेटेलाइट के माध्यम से प्रदूषण पर नजर रखेंगे। इसके अलावा हवाई जहाज के माध्यम से हवा से एरोसॉल (डस्ट पार्टिकल) का अध्ययन किया जाएगा। वायुमंडल विभाग के वैज्ञानिकों के अनुसार एरोसॉल रोबोटिक नेटवर्क सिस्टम सेटेलाइट से नियंत्रित होगा। इसके माध्यम से वातावरण में सूक्ष्म कणों के घनत्व का तो पता लगेगा। इसके अलावा नासा ने उत्तर भारत में प्रदूषण के अध्ययन के लिए बरेली, पंतनगर विश्वविद्यालय, और आई०आई०टी० कानपुर में यह सेंटर विकसित किया है।
जंगल जलने से बचाएगा मॉडल दैनिक जागरण जून 2, 2008	भारतीय वन अनुसंधान संस्थान (एफआरआई) और इंडियन स्पेस रिसर्च ऑर्गनाइजेशन (इसरो) के वैज्ञानिकों की कोशिशें अगर कामयाब हुईं तो अगले कुछ सालों में प्रदेश के जंगलो को बेकाबू आग से मुक्ति मिल सकती है। एफआरआई और इसरो के वैज्ञानिक ऐसा वैज्ञानिक मॉडल बनाने का प्रयास कर रहे हैं, जिससे जंगल की आग पर काबू पाया जा सके और अलग–अलग मौसम में जंगल की आग का पूर्वानुमान लगाया जा सके। यह भी पता लगाया जा सके कि प्रदेश में जल्द आग पकड़ने वाले वन कितने हैं और अगर जंगल में आग लग जाए तो उसका फैलाव कहां तक हो सकता है, आग लगने पर धुआं कहां तक फैल सकता है। एफआरआई के वैज्ञानिकों की एक टीम प्रदेश के तेरह जिलों के वनावरण के आंकड़े जुटा रही है। वैज्ञानिक इन आंकड़ों का विश्लेषण भी करेंगे और इसके साथ ही इसरो के वैज्ञानिक इन आंकड़ों और उनके विश्लेषण के आधार पर मॉडल विकसित करने का कार्य करेंगे। इसके लिए भारत के उपग्रहों से प्राप्त चित्रों और डाटा का सहारा लिया जाएगा। मॉडल अगर सफल रहा तो उसे अन्य राज्यों में भी लागू किया जाएगा।

प्रदेश का मौसम केंद्र सेटेलाइट इमेज से जुड़ा अमर उजाला जून 14, 2008	मौसम में होने वाले तत्कालिक परिवर्तनों पर भी समय से निगरानी कर उसकी सूचना जारी की जा सकेगी। इसके लिए राज्य मौसम केंद्र को अत्याधुनिक सुविधाओं और यंत्रों से लैस किया जा रहा है। सब कुछ ठीक और समय पर हुआ तो आने वाले चंद दिनों के अंदर मौसम में एक घंटे के भीतर होने वाले परिवर्तनों का भी समय से पता लगाया जा सकेगा। राज्य मौसम केंद्र ने अपने लिए रडार की मांग पहले ही की हुई है। इसके अलावा मौसम केंद्र को और भी अत्याधुनिक तकनीकों से जोड़ा जा रहा है। मौसम केंद्र को सीधे सेटेलाइट इमेज से जोड़ दिया गया है। सेटेलाइट से सीधे इमेज प्राप्त होने के बाद तत्काल आंकलन कर मौसम की जानकारी जुटाई जा रही है। उत्त्तराखण्ड में अधिकतर एरिया पहाड़ी होने के कारण यहां मौसम में बड़ी तेजी से परिवर्तन होता है। अचानक होने वाले परिवर्तनों के समय से पता नहीं चलने से काफी नुकसान का भी सामना करना पड़ रहा है। इसलिए ऐसी तकनीकों से मौसम केंद्र को जोड़ा जा रहा है जो यहां एक घंटे में होने वाले मौसम के परिवर्तन पर भी नजर रख सके। इसका सबसे अधिक लाभ आपदा से होने वाले नुकसान को रोकने में मिलेगा।
द्रोण पर्वत पर संजीवनी खोजेंगे विशेषज्ञ अमर उजाला जून 17, 2008	त्रेतायुग में संजीवनी ने लक्ष्मण के प्राण बचाए थे। उत्त्तराखण्ड सरकार कलियुग में इससे आम आदमी के प्राण बचाना चाहती है। स्वास्थ्य मंत्रालय की योजना जल्द ही विशेषज्ञों की एक टीम को द्रोणागिरी पर्वत भेजने की तैयारी कर रही है। द्रोणागिरी के साथ ही सुमेरू और छोटा कैलाश पर्वत पर भी टीम भेजने की सिफारिश की गई है। संजीवनी को लेकर स्वास्थ्य मंत्रालय ने आठ महीने पहले कसरत शुरू की थी। कोलंबो में एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन से लौटने के बाद स्वास्थ्य मंत्री ने इस पर काम शुरू कराया है। सरकार के जड़ी–बूटी सलाहकार से रिपोर्ट भी मांगी गई। इस रिपोर्ट के आधार पर द्रोणागिरी पर्वत भेजने वाली टीम की काफी कुछ शक्ल तैयार कर ली गई है। रिपोर्ट में स्थानीय वैद्यों से लेकर जड़ी–बूटी विशेषज्ञ, रसायन शास्त्री, जीवाश्म विशेषज्ञ, पुरातत्वविद्, फाइटो कैमिस्ट आदि तक को विशेषज्ञ के तौर पर टीम में रखने का सुझाव दिया गया है। इसके अलावा टीम को कार्तिक और भादों के महीने में ही भेजने का सुझाव दिया गया है। माना जाता है कि इन महीनों में जड़ी–बूटी परिपक्व अवस्था में रहती हैं।